[2015] 14 एस. सी. आर 374

जुपुडी पारधा सारथी

बनाम

पेन्टापट्टी रामकृष्णनंद व अन्य

(सिविल अपील सं. 375/2007)

06 नवंबर, 2015

[एम. वाई. ईक्बाल और सी. नागप्पन, जे. जे.]

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 - धारा 14 (1)- हिंदू महिला का अधिकार -यदि वादग्रस्त संपत्ति को पति द्वारा अपनी पत्नी को उसके जीवन काल में भरण पोषण के रूप में उपयोग एवं उपभोग के लिए वसीयत में दी गई है, तब धारा 14 (1) के प्रावधानानुसार वादग्रस्त संपत्ति पर उसका सीमित अधिकार पूर्ण अधिकार बन जाता है।

याचिका खारिज करते हुए कोर्ट ने, निर्णीत किया:

1. हिन्दू विधि का यह स्थापित सिद्धान्त हें कि पति का यह निजी दायित्व हे कि वह अपनी पत्नी का भरण पोषण करे और यदि पति के पास संपत्ति हे तो पत्नी को उक्त संपत्ति में से भरण पोषण प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त है । यह भी स्थापित सिद्धान्त हे कि हिन्दू महिला का भरण पोषण का अधिकार मात्र कोई औपचारिकता नहीं है जिसे सिर्फ रियायत,

अनुग्रह अथवा उपकार के रूप में इस्तेमाल किया जाए, परंतु यह एक मूल्यवान, आध्यात्मिक और नैतिक अधिकार है। हालांकि एक विधवा का भरण पोषण प्राप्त करने का अधिकार, उसके पति कि संपत्ति पर कोई अधिकार पैदा नहीं करता हे लेकिन निश्चित रूप से एक विधवा भरण पोषण का अधिकार उत्पन्न कर न्यायालय से भरण पोषण की डिक्री प्राप्त कर सकती हे। हिंदू विवाहित महिला का प्रथक, भरण पोषण और निवास का अधिकार अधिनियम, 1946 बनाकर ऐसे अधिकार को वैधानिकता दी गई थी, और, इसलिए, इसमे कोई संदेह नहीं हे की भरण पोषण का अधिकार पहले से ही मौजूद अधिकार है। [पैरा15,16] [388-डी-जी]

2. हस्तगत प्रकरण में, वसीयत 1920 में निष्पादित की गई थी, जिसमें 'एसआर' ने उल्लेख किया है कि उनकी पहली पत्नी की मृत्यु हो गई थी, दूसरी पत्नी को दो बेटे और एक बेटी हुई। इसके बाद, दूसरी पत्नी की भी मृत्यु हो गई। इसके बाद उसने 'वी' से तीसरी पत्नी के रूप में शादी की, जो जीवित है। वसीयत के निष्पादक ने अपने स्वामित्व वाली संपत्तियों के विवरण का उल्लेख भी किया है। उसने वसीयत में विशेष रूप से उल्लेख किया है कि उसकी तीसरी पत्नी 'वी', कम्पाउन्ड में स्थित टाइल वाले घर को जीवन भर इस्तेमाल कर सकेगी। वसीयत में यह भी उल्लेख किया गया कि विधवा 'वी' को एक अन्य घर के पिछवाड़े में स्थित कुएँ से पानी भरने का अधिकार भी प्राप्त होगा। दूसरे शब्दों में, वसीयत के निष्पादक ने वादग्रस्त संपत्ति में अपनी तीसरी पत्नी के जीवन काल में

उसके भरण पोषण के लिए व्यवस्था कर दी थी। ना तो वसीयत की प्रामाणिकता विवादित है और ना ही यह विवादित है कि 'वी' भरण पोषण के रूप में संपत्ति से लाभ प्राप्त कर रही थी। जब तक कि पत्नी के पक्ष में संपत्ति की वसीयत करने के तथ्य और लगातार आधिपत्य विववादित नहीं हुआ तब तक अभिवचन और साबित करने का प्रश्न उत्पन्न नहीं हुआ था। इसके अलावा, 'एस. आर.', संपत्ति के मूल मालिक, को निर्विवाद रूप से, इस तथ्य का एहसास था कि उसकी पत्नी 'वी' संतानहीन थी जिसे उसकी संपत्ति में भरण पोषण के पूर्व-वियमान अधिकार प्राप्त है। उसको यह भी एहसास था कि वह शारीरिक रूप से कमजोर है और लंबे समय तक जीवित नहीं रह सकता हैं। इसलिए उसने अपनी संपत्ति को अपने परिवार के सदस्यों को देने का फैसला किया।

निर्विवादित रूप से, किसी ने भी वसीयत में की गई व्यवस्थाओं पर कोई विवाद नहीं किया और 'वी' ने उक्त संपत्ति का उपभोग करना जारी रखा। उपरोक्त स्वीकृत स्थिति को ध्यान में रखते हुए, अधिनियम की धारा 14 (1) के प्रावधान अनुसार, विधवा का वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में सीमित अधिकार एक पूर्ण अधिकार बन गया। हालांकि प्रदर्शनी ए-2 में ऐसा कोई विशिष्ट शब्द का उल्लेख नहीं किया गया है कि भरण पोषण के एवज़ में 'वी' के पक्ष में कोई अधिकार उत्पन्न हो गया हे, परंतु उसके भरण पोषण के पूर्व-वियमान अधिकार से जो भी एक सीमित अधिकार उसके पक्ष में उत्पन्न हुआ था, वही हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा

14 (1) के लागू होने से एक सम्पूर्ण अधिकार बन गया है [पैरा 21, 31 से 34] [394 - ए-डी; 401-बी-सी, डी-ई, एफ-जी; 402-बी-सी]

निर्मल चंद बनाम विद्या वंती (1969) 3 एस. सी. सी. 628; थोटा शेषरथम्मा बनाम थोटा माणिक्यम्मा 1991 (3) एससीआर 717:(1991)4 एससीसी 312- निर्भरता रही।

जी. रामा बनाम टीजी शेषगिरी राव 2008 (10) एससीआर 152: (2008) 12 एस. सी. सी. 392; मास्टर कर्मी बनाम.अमरू व अन्य ए. आई. आर 1971 एस. सी. 745 - लागू नहीं होना निर्णीत किया गया।

साधु सिंह बनाम गुरुद्वारा साहिब नरीके 2006 (5) suppl॰ एस. सी. सी. 75 – भेद किया गया

वी. तुलासम्मा व अन्य बनाम शेषा रेड्डी (मृत) जरिये विधिक प्रतिनिधियों के, AIR 1977 SC 1944 : 1977 (3) एससीआर 261; आर. बी. एस. एस. मुन्नालाल व अन्य बनाम एस. एस. राजकुमार व अन्य ए. आई. आर 1962 एस. सी. 1493: 1962 suppl॰ एस. सी. आर. 418; शकुंतला देवी बनाम कमला व अन्य (2005) 5 एस. सी. सी. 390; संतोष व अन्य बनाम सरस्वतीबाई व अन्य 2007 (12) एससीआर 375 : (2008) 1 एस. सी. सी. 465; सुभान राव व अन्य बनाम पार्वती बाई व अन्य (2010) 10 एस. सी. सी. 235; श्री रामकृष्ण मठ बनाम एम. महेश्वरन व अन्य 2010 (11) एससीआर 1157: (2011) 1 एस. सी.

सी. 68; नजर सिंह व अन्य बनाम जगजीत कौर और अन्य 1995 (5) suppl॰ एससीआर 162: (1996) 1 एससीसी 35- संदर्भ प्राप्त किया गया॰

नज़ीरें जिनसे सहायता प्राप्त की गई

1977 (3) एससीआर 261, संदर्भ प्राप्त किया गया	पैरा 9
ए. आई. आर 1971 एस. सी. 745, लागू नहीं होना निर्णीत	पैरा 9
2008 (10) एससीआर 152, लागू नहीं होना निर्णीत	पैरा 14
1962 suppl॰ एससीआर 418, संदर्भ प्राप्त किया गया	पैरा 22
(1969) 3 एस. सी. सी. 628, भरोसा किया गया	पैरा 23
1991 (3) एससीआर 717, भरोसा किया गया	पैरा 24
(2005) 5 एस. सी. सी 390, संदर्भ प्राप्त किया गया	पैरा 25
2007 (12) एससीआर 375, संदर्भ प्राप्त किया गया	पैरा 26
(2010) 10 एस. सी. सी. 235, संदर्भ प्राप्त किया गया	पैरा 26
2010 (11) एससीआर 1157, संदर्भ प्राप्त किया गया	पैरा 26
1995 (5)suppl॰एससीआर 162, संदर्भ प्राप्त किया गया	पैरा 29
2006 (5)suppl॰ एस.सी.आर.799, भेद किया गया	पैरा 30

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः सिविल अपील सं॰ 375/ 2007

आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय, हैदराबाद द्वारा प्रथम अपील संख्या 1774/1991 में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 21.09.2006 को पारित निर्णय और आदेश से।

अपीलार्थियों की ओर से अधिवक्ता के. वी. विश्वनाथन, वरिष्ठ अधिवक्ता , ए. रमेश, आर. चंद्रचूड़, रवि रघुनाथ, सिद्धांत बक्शी, सैयद अहमद नकवी, शिल्पी गुप्ता (सुश्री जी. माधवी के लिए)

प्रत्यर्थीगण की ओर से अधिवक्तागण के. राममूर्ति, ए. टी. एम. रंगा रामानुजम, वरिष्ठ अधिवक्ता, एस. कुमार, हितेश कुमार शर्मा, एम. कृष्णन, वी अधिमूलम (सुश्री अनु गुप्ता के लिए), के. शिवराज चौधरी,

न्यायालय का निर्णय निम्नानुसार सुनाया गया -

एम. वाई. एक्बाल, जे.

1. यह अपील विशेष अनुमति द्वारा आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के दिनांकित 21.9.2006 के आदेश के विरुद्ध प्रस्तुत की गई हे, जिसमे एकल न्यायाधीश द्वारा प्रतिवादी सं. 1 द्वारा दायर की गई अपील को स्वीकार कर अपिलार्थी द्वारा प्रस्तुत मूल वाद में विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री को अपास्त किया।

2. एकमात्र प्रश्न जिस पर विचार करने की आवश्यकता है वह यह हे कि क्या उच्च न्यायालय द्वारा हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (संक्षेप में 'अधिनियम') के प्रावधानों की व्याख्या कानूनी रूप से सही की

है, जिसमे उच्च न्यायालय द्वारा निर्णीत किया गया हे कि मृतक पी. वेंकट सुब्बा राव की विधवा द्वारा अधिनियम की धारा 14 के प्रावधान अनुसार संपत्ति में पूर्ण हित अर्जित कर लिया है।

3. यह निर्विवाद तथ्य यह है कि उक्त वादग्रस्त संपत्ति मूल रूप से पी. वेंकट सुब्बा राव के स्वामित्व की थी, जिसकी तीन पत्नियाँ थी। इनमे से सिर्फ दूसरी पत्नी को दो पुत्र, जिसमें प्रतिवादी नरसिम्हा राव भी शामिल था, और एक पुत्री प्राप्ति का सौभाग्य मिला। वीरराघवम्मा उक्त पी. वेंकट की तीसरी पत्नी थी लेकिन उसे कोई संतान प्राप्ति नहीं हुई। पी. वेंकट सुब्बाराव ने वर्ष 1920 में एक वसीयत (Exh.A2) अपनी पत्नी वीराघवम्मा के पक्ष में निष्पादित की, तत्पश्चात वीराघवम्मा ने दिनांक 14.7.1971 एक वसीयत प्रतिवादी पेंटापति सुब्बा राव के पक्ष में निष्पादित की और उसके बाद वर्ष 1976 में उसकी मृत्यु हो गई। प्रतिवादी का यह कहना है कि उक्त पी. नरसिम्हा राव को वादी के पक्ष में संपत्तियों को हस्तांतरित करने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं है।

4. वादी -अपीलार्थी का कहना है की कि उसने वादग्रस्त संपत्ति को पी. नरसिम्हा राव से खरीदा है, जिसके वसीयतकर्ता की पत्नी वीराघवम्मा की मृत्यु पश्चात उक्त वादग्रस्त संपत्ति में अधिकार निहित हुये थे। वादी-अपीलार्थी के अनुसार, वीराघवम्मा ने अपने जीवनकाल के दौरान वादग्रस्त संपत्तियों का उपयोग एवं उपभोग किया और उसकी मृत्यु के पश्चात उक्त संपत्ति का हस्तांतरण वादी के विक्रेता को प्राप्त हुआ।

5. निचली अदालत ने दोनों पक्षों के निर्विवाद मामले को रेखांकित किया कि स्वर्गीय पी. वेंकट सुब्बा राव ने वीराघवम्मा के पक्ष में वसीयत (Exh.A2) निष्पादित की, परंतु वीराघवम्मा के पास उक्त संपत्ति के उपयोग एवं उपभोग के सीमित अधिकार प्राप्त थे और वीराघवम्मा मृत्यु पश्चात पी. नरसिम्हा राव को उक्त संपत्ति के उपयोग एवं उपभोग के पूर्ण स्वामित्व अधिकार प्राप्त हुये। हालांकि, निचली अदालत ने माना कि वीराघवम्मा को वसीयत से प्राप्त संपत्ति के उपयोग एवं उपभोग का अधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) के तहत पूर्ण स्वामित्व में तब्दील नहीं हुआ और पी. नरसिम्हा राव के पक्ष में वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में निहित अधिकार समाप्त नहीं हुये, तदनुसार, वाद डिक्री किया गया।

6. निचली अदालत के फैसले से व्यथित हो कर प्रतिवादी संख्या 1 –पी सुब्बा राव ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील प्रस्तुत की। उच्च न्यायालय द्वारा अपील स्वीकार कर ट्रायल कोर्ट के निर्णय व डिक्री को अपास्त कर यह अभिनिर्धारित किया कि वीराघवम्मा को अधिनियम कि धारा 14(1) के आधार पर वादग्रस्त संपत्ति का सम्पूर्ण स्वामित्व प्राप्त हो गया और उसे पी. सुब्बा राव, जो प्रदर्श बी 1 एवं बी 2 में प्रथम प्रतिवादी था, के पक्ष में उक्त संपत्ति को वसीयत करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त था।

7. अतः विशेष अनुमति से वादी द्वारा यह वर्तमान अपील प्रस्तुत की गई। उच्च न्यायालय के समक्ष अपील के लंबित रहने के दौरान प्रथम प्रतिवादी की मृत्यु हो गई और उसके विधिक प्रतिनिधि को अभिलेख पर

लाया गया जो वर्तमान अपील में रेस्पोंडेंट संख्या 1 से 3 के रूप में उल्लेखित हैं। रेस्पोंडेंट संख्या 4 प्रतिवादी संख्या 3 हे, और रेस्पोंडेंट संख्या 5, जो की प्रतिवादी संख्या 4 था, की अपील के लंबन काल के दौरान मृत्यु हो जाने पर उसके विधिक प्रतिनिधि, को अभिलेख पर लाया गया। प्रतिवादी संख्या दो की मृत्यु वाद के लंबन काल के दौरान होने पर अन्य रेस्पोंडेंट को प्रतिवादी संख्या दो के विधिक प्रतिनधि के रूप में अभिलेख पर लाया गया। चूंकि रेस्पोंडेंट संख्या 4 ने वाद ग्रस्त दुकान को खाली कर दुकान का कब्जा दिनांक 6.7.2006 को वादी को सुपुर्द कर दिया, अतः अपीलान्ट ने रेस्पोंडेंट संख्या 4 को पक्षकार के रूप से हटाये जाने की प्रार्थना इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की, जिस पर तदनुसार आदेश किया गया।

8. इससे पहले कि हम इस अपील में उठाए गए प्रश्नों पर निर्णय लें हम वसीयत (Exh.A1) की अंतर्वस्तु को पुनः उललेखित करना चाहेंगे, जो इस प्रकार हैः

> "मैं, पुलारवती वेंकट सुब्बा राव, पुत्र स्वर्गीय पुलारवती वेंकम्मा वैश्य, ओ;व्यापार, आर/ओ राजमुंदरी, वसीयत दिनांक 24.08.1920 को पूर्ण चेतना और विवेक के साथ निष्पादित करता हूँ।
>
> मैं लगभग 53 वर्ष का हो गया हूँ। अब मैं कमजोर हो गया हूँ और इसके परिणामस्वरूप मैं अधिक समय तक

जीवित नहीं रह सकता हूँ, इसलिए मैंने निम्नलिखित अपनी समस्त चल और अचल संपत्तियाँ को इस वसीयत के माध्यम से देने का निर्णय किया है। मेरी पहली पत्नी की निःसंतान मृत्यु हो गई। मेरी दूसरी पत्नी को दो बेटे मनिकयारो और नरसिम्हा राव और एक पुत्री नागरथनाममा उत्पन्न हुए हैं। इसके बाद मैंने अपनी तीसरी पत्नी वीराघवम्मा से शादी की। वह जीवित है। उसने किसी बच्चे को जन्म नहीं दिया है। मेरे पास एक मकान हैं, जिस पर नगर पालिका का D.No.6/875 अंकित है, एक अन्य मकान जिस पर नगर पालिका का D.No.6/876 अंकित है और 5 दुकानें जिससे सटी हुई मकान संख्या 6/870 की खुली जगह इनेसपेटा, राजमुंदरी गाँव, राजमुंदरी उप रजिस्ट्री, ई. जी. जिला में स्थित हैं। मेरे पास 15.17 सेंट रकबा की गीली जमीन रुस्तुम्बादा गाँव नरसपुरम उप रजिस्ट्री, नरसपुरम तालुका में स्थित है। उक्त संपत्ति मेरी दूसरी पत्नी के नाम पर थी और उसके मृत्यु पश्चात ऊपर बताए गए मेरे दो बेटों के नाम नामांतरित हुई।

मेरे पास ओरिएंटल लाइफ इंश्योरेंस कंपनी की एक पॉलिसी संख्या 23232 है जिससे मुझे रुपये प्राप्त होने हैं तथा चांदी, सोना, पीतल के घर के बर्तन बीरूवा, फर्नीचर,

लोहे की तिजोरी आदि हैं. मैंने निम्न लिखित व्यवस्था की है जो मेरे मेरे जीवनकाल के बाद अमल मैं आएंगी।

मेरी तीसरी पत्नी वीराघवम्मा को टाइल वाले मकान व उसके साथ साइट और परिसर की दीवार और राजमुंदरी स्थित नगरपालिका मकान संख्या D.No.6/875, से ढंका हुये कुएँ का आधा अधिकार प्राप्त होगा और मेरी पत्नी की मृत्यु के बाद मेरे 2nd पुत्र नरसिम्हा राव को संपत्ति दान, विक्रय आदि के सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त होंगे। मेरे दूसरे नंबर के पुत्र पी नरसिम्हा राव के पास, उक्त संपत्ति जिसमे टाइल वाले मकान संख्या 6 / 876 और मकान संख्या 6/870 द्वारा घेरी गई 5 दुकान के कमरे और उक्त दोनों सम्पत्तियों से सटी हुई कोठरी एवं चावडी और दो में से एक बड़ी लेट्रिन शामिल हैं, को दान, विक्रय वगेरह करने के सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त होंगे और मेरी पत्नी वीराघवम्मा मकान संख्या 6/870 की छोटी लेट्रिन को जीवन भर उपयोग व उपभोग कर सकेगी और उसकी मृत्यु पश्चात मेरे बेटे नरसिम्हा राव को उक्त संपत्ति को बेचान, दान आदि करने के सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त होंगे। उक्त वीरराघवम्मा को मकान संख्या 6/870 के पीछवाड़े में स्थित कुएँ से पानी भरने का अधिकार प्राप्त होगा। मेरे सबसे बड़े पुत्र मनियराओ को

रुस्तुम्बाड़ा गाँव नरसापुरम तालुका में स्थित ज़ेरोईटी गीली भूमि रकबा 15.17 सेंट्स के संबंध में बेचान, दान आदि सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त होंगे और मेरे सबसे बड़े बेटा मणियाराव Rs.650/- का भुगतान मेरी पत्नी को करेगा जिसका भुगतान करने के लिए मैं उत्तरदायी हूँ। इस प्रकार नागरत्नम्मा या किसी और को उक्त संपत्ति पर कोई अधिकार प्राप्त नहीं होगा।

बीमा कंपनी से प्राप्त होने वाली राशि को वसूल कर मेरे दोनों बेटों, मेरी बेटी और मेरी पत्नी के बीच बराबर बराबर बांटी जाएगी। और यह कि उनके पास पड़े गहने पर उनका सम्पूर्ण अधिकार होगा और कोई भी इसके संबंध में कोई दावा नहीं कर सकेगा।

मैंने यह वसीयत अपनी स्वस्थ और पूर्ण इंद्रियों के साथ निष्पादित की है जो कि मेरे जीवनकाल समाप्त होने पर अमल में आएगी। इस वसीयत में उल्लेखित समस्त संपत्तियाँ मेरी स्वअर्जित हें और मुझे कोई पुश्तैनी संपत्ति प्राप्त नहीं हुई है।

मैं इस वसीयत को अपने जीवन काल में बदलने के सभी अधिकार अपने पास सुरक्षित रखता हूँ।

हस्ताक्षरित पुलारवती वेंकट सुब्बा राव

अनुप्रमाणित साक्षी

मोडाली सुब्बारायुडु

येंदी सुरैया

पुलारवती वेंकट सुब्बा राव द्वारा अपनी खुद की लिखावट से लिखित

उक्त वसीयत कि अंतर्वस्तु मेरी मृत्यु पश्चात लागू होगी।

पुलारवती वेंकट सुब्बाराव द्वारा हस्ताक्षरित"

9. हालाँकि निचली अदालत ने इस न्यायालय के वी. तुलासम्मा और अन्य बनाम शेष (ए.आई.आर.1977 एस.सी.1944) के मामले कि तरफ ध्यान आकर्षित किया लेकिन यह निर्णीत किया कि उक्त मामले में राजीनामा के आधार पर हिन्दू विधवा को स्पष्ट रूप से भरण पोषण के बदले में अचल संपत्ति प्राप्त हुई थी, और इसीलिए अधिनियम कि धारा 14(1) आसानी से उक्त प्रकरण में लागू हुई थी। जबकि, निचली अदालत ने इस न्यायालय के मास्टर कर्मी बनाम अमरू व अन्य (ए. आई. आर. 1971 एस. सी. 745) के मामले में दिये गए निर्णय को इसलिए हस्तगत प्रकरण में लागू माना क्योंकि उक्त प्रकरण में हिन्दू विधवा वसीयत में प्राप्त अधिकार के आधार पर अपने पति की संपत्तियों का उत्तराधिकारी बनी थी।

इसे और अच्छे से समझने के लिए निचली अदालत के निर्णय के पैराग्राफ 25, 26 और 27 का उल्लेख इस प्रकार किया जाता हैः

"25. प्रतिवादी संख्या 1 के वकील ने हनुमयम्मा बनाम ताडीकमल्ला कोटिलिंगम (1986 (1) ALT.546) पर भारी निर्भरता रखी, मात्र यही निर्णय है जिसमे यह तय किया गया था कि यह आवश्यक नहीं है कि वसीयत या अन्य कोई भी दस्तावेज़ जिसमे सम्पत्तियों का हस्तांतरण किसी हिन्दू महिला को किया गया हे उसमे यह स्पष्ट रूप से उल्लेख होना चाहिए कि संपत्ति का हस्तांतरण किसी पूर्व-विद्यमान अधिकार अथवा भरण पोषण के अधिकार के रूप में किया गया हे और मात्र यही पर्याप्त है कि जिस दिन दस्तावेज़ निष्पादित हुआ है उस दिन हिन्दू महिला के पक्ष में सिर्फ अधिकार मौजूद था। यह निर्णय उच्च न्यायालय के एकल जज द्वारा पारित किया गया था। यह ऐसा मामला था जहा उच्च न्यायालय हिन्दू महिला को वसीयत से प्राप्त संपत्ति के संबंध में विवेचना कर रही थी।

26. वद्देबोयना तुलसम्मा बनाम वद्देबोयना सेशा रेड्डी(AIR 1977 SC 1944) के मामले में एक हिन्दू विधवा को मृतक पति के भाइयों के विरुद्ध भरण पोषण की डिक्री प्राप्त की थी और वह भरण पोषण की प्राप्ति के लिए उक्त

डिक्री का निष्पादन करवा रही थी। इसी समय के दौरान हिन्दू विधवा और मृतक के भाइयों के बीच एक समझौता तय पाया गया था जिसमे हिन्दू विधवा को अचल संपत्ति को हस्तांतरण के सीमित अधिकारों के साथ उपयोग एवं उपभोग के लिए दी गई थी। यह एक ऐसा मामला था जहाँ हिंदू विधवा को भरण पोषण और भरण पोषण की डिक्री की संतुष्टि के बदले में स्पष्ट रूप से संपत्ति दी गई थी। इसलिए, अधिनियम की धारा 14 (1) मामले में आसानी से लागू होती है। दूसरी ओर, मास्टर कर्मी बनाम अमरो (ए. आई. आर. 1971 एस. सी. 745) के मामले में हिंदू विधवा को एक वसीयत, जिसमे उसे संपत्ति का अधिकार दिया गया था, के आधार पर अपने पति की संपत्तियों प्राप्त करने में सफल हुई थी। इन परिस्थितियों में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि हिंदू विधवा जो वसीयत के बल पर अपने पति की संपत्तियों को प्राप्त करने में सफल रही हे, और वसीयत से प्राप्त उक्त संपत्ति पर वह किसी भी अधिकार का दावा नहीं कर सकती हे, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के प्रावधानों के तहत वसीयत से प्राप्त संपत्ति एक पूर्ण संपत्ति नहीं बन सकती है।

यह निर्णय उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायाधीशों द्वारा दिया गया था।

इस निर्णय का ऊपर उल्लिखित वर्ष 1977 के मामले में संदर्भित नहीं किया गया था। वर्ष 1977 का निर्णय भी सर्वोच्च न्यायालय के तीन न्यायाधीशों द्वारा दिया गया था। जब उच्चतम न्यायालय के बाद का निर्णय हस्तगत मामले के तथ्यों से मेल खा रहे हैं, तब वर्ष 1977 के उच्चतम न्यायालय का निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं किया जा सकता।

27. श्रीमती कुलवंत कौर बनाम मोहिंदर सिंह (ए. आई. आर. 1987) एससी 2251) के मामले में अधिनियम की धारा 14 (1) के प्रावधान को लागू किया गया था क्योंकि यह एक ऐसा मामला था जहाँ हिंदू महिला को स्पष्ट रूप से भरण पोषण के अनुसरण में संपत्ति का कब्जा प्रदान किया गया था। इसी तरह, गुरदीप सिंह बनाम अमर सिंह (1991 (1) L.W.15) में बताए गए निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 14 (1) के प्रावधानों को लागू किया गया जहां पत्नी ने स्पष्ट रूप से भरण पोषण के बदले में अपने पति से उपहार के रूप में संपत्ति अर्जित की थी। बाई वाजिया बनाम ठाकुरभाई चेलभाई (ए. आई. आर. 1979

एस. सी. 993) में भी हिंदू विधवा ने भरण पोषण की राशि के भुगतान में चूक करने के कारण संपत्ति पर कब्जा प्राप्त किया था। इसलिए, उच्चतम न्यायालय ने इस मामले में धारा 14 (1) के प्रावधानों को लागू किया।"

10. इस न्यायालय द्वारा ऊपर उद्धृत निर्णय और उच्च न्यायालय के अन्य निर्णयों में तय किए गए अनुपात के आधार पर निचली अदालत ने माना कि प्रदर्शनी ए-2 के तहत वीराघवम्मा को प्राप्त संपत्ति के सीमित अधिकार को हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम धारा 14 (1) के तहत संपत्ति के पूर्ण अधिकार में तब्दील नहीं किया जा सकता और वादग्रस्त संपत्ति में नरसिम्हा राव के निहित शेष हित को समाप्त नहीं किया जा सकता।

11. अपील में, उच्च न्यायालय ने, विचारण न्यायालय द्वारा नोट किए गए इस न्यायालय के निर्णयों में और इस न्यायालय के अन्य निर्णयों में तय किए गए अनुपात पर चर्चा करने के बाद विचारण न्यायालय के इस निष्कर्ष को उलट दिया कि मामला धारा 14 (1) के अधीन आता है और वीराघवम्मा पूर्ण मालिक बन गई थी और उसे वादग्रस्त संपत्ति को प्रथम प्रतिवादी पी. सुब्बा राव के पक्ष में जरिये प्रदर्श बी-1 और बी-2 वसीयत करने का पूरा अधिकार प्राप्त था

उच्च न्यायालय ने कहा किः

"माननीय न्यायमूर्ति जगन्नाथ राव के उपरोक्त आधिकारिक निर्णय के बाद सर्वोच्च न्यायालय द्वारा किए गए कई निर्णयों को ध्यान में रखते

हुए मेरी राय है कि विचारण न्यायालय द्वारा दिया गया यह तर्क, कि चूंकि प्रदर्श A2 में ऐसा कोई शब्द अंकित नहीं है की उक्त संपत्ति पूर्व-विद्यमान अधिकार या भरणपोषण के अधिकार के रूप में दी गई है, ऐसे में यह अधिकार पूर्ण संपत्ति के अधिकार में तब्दील नहीं हो जाता है, बहुत ही अप्रासंगिक है और उपरोक्त निर्णयों के बिल्कुल विपरीत है। केवल इसलिए कि वीरराघवम्मा को पी. नरसिम्हा राव (वादी का विक्रेता) का संरक्षक नियुक्त किया गया था- यह नहीं कहा जा सकता था कि वीरराघवम्मा के पास संपत्ति के संबंध में कोई पूर्व विद्यमान अधिकार या भरण पोषण का अधिकार प्राप्त नहीं था, जिससे उसके पक्ष में सीमित अधिकार सृजित किया गए थे। वादी के विक्रेता के पास, उसके नैसर्गिक पिता की मृत्यु के बाद, प्रश्नगत संपत्ति के अलावा भी संपत्ति थी और वीरराघवम्मा को उसके संरक्षक के रूप में नियुक्त क्या गया था। वादी के विक्रेता के व्यसकता प्राप्त करने के तुरंत बाद संरक्षता समाप्त हो गई और वह अपनी चल अचल संपत्ति की सार संभाल खुद से करने लगा। यह बिलकुल भी नहीं कहा जा सकता कि वीरराघवम्मा के पक्ष में संपत्ति का आधिकार सबसे पहले वसीयत प्रदर्श A2 से उत्पन्न हुआ, निस्संदेह, उसके पास अपने पति से भरण पोषण प्राप्त करने का एक पूर्व-विद्यमान अधिकार प्राप्त था, इसलिए, यह उसके पति का कर्तव्य था कि पत्नी के जीवनकाल के दौरान उसका पालन-पोषण करे। हालांकि Ex.A2 में ऐसा कोई विशिष्ट शब्द का उल्लेख नहीं किया गया है कि भरण पोषण के बदले संपत्ति में अधिकार उत्पन्न हुआ हे, परंतु धारा 14 (1) के तहत एक हिंदू महिला के पक्ष में किसी भी

रूप में उत्पन्न एक सीमित अधिकार, जिसके पास भरण पोषण प्राप्त करने का पूर्व-विद्यमान अधिकार प्राप्त है, 1956 के अधिनियम के लागू होने के ठीक बाद सम्पूर्ण अधिकार में तब्दील हो जाता है।

जैसे वीरराघवम्मा अधिनियम की धारा 14 (1) के आधार पर पूर्ण स्वामी बन गई। उसे प्रतिवादी संख्या 01 के पक्ष में वसीयत प्रदर्श बी 1 और प्रदर्श बी2 करने का अधिकार निहित था। इसलिए पी॰ नरसिम्हा राव को प्राप्त निहित अधिकार निरस्त हो गए, और उसे विक्रय पत्र प्रदर्श A1 से वादी के पक्ष में उक्त संपत्ति विक्रय करने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं था। जैसा कि वीरराघवम्मा को प्राप्त सीमित अधिकार सम्पूर्ण अधिकार में विकसित हो गए, उक्त संपत्ति को Exs.B1 और B2 के तहत प्रतिवादी को वसीयत करना कानूनी और वैध है। मामले के उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, मेरी राय में वीरराघवम्मा को अपने जीवनकाल के दौरान प्राप्त सीमित अधिकार हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के लागू होने के बाद धारा 14 (1) के परिप्रेक्ष्य में एक पूर्ण अधिकार में तब्दील हो गया और वादी के विक्रेता के पक्ष में उत्पन्न निहित अधिकार को रद्द किया जाता है।

12. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री के. वी. विश्वनाथन, ने अपने तर्क को विधि के इस प्रश्न तक सीमित रखा कि क्या उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 14 (1) के प्रावधान लागू करते हुये संपत्ति में विधवा वीराघवम्मा को सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त होने का

निर्णय कर विधि की भूल की है। विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित बहस की :

> "(i) धारा 14 (1) की व्याख्या इस अर्थ में नहीं की जा सकती है कि प्रत्येक वसीयत जो किसी संपत्ति में किसी विधवा को सीमित/आजीवन अधिकार प्रदान करती है, वह उसे भरण-पोषण के बदले में ही प्राप्त होना माना जाएगा। यदि वसीयतकर्ता अपनी वसीयत में विशेष रूप से उल्लेख करता है कि वह विधवा को उसके जीवन काल के लिए ही अपनी संपत्ति को उपयोग एवं उपभोग करने का सीमित अधिकार दे रहा है, तब वसीयतकर्ता को विधवा के अधिकार सीमित करने के अधिकार को हिंदू उत्तराधिकार की धारा 14 (2) के द्वारा मान्यता प्रदान की जाती है। इसके अलावा, वसीयतकर्ता का अपनी संपत्ति को वसीयतनामा द्वारा या अन्य किसी प्रकार से वसीयत करने के अधिकार को हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 30 द्वारा मान्यता प्रदान करता है। इसलिए, हिंदू उत्तराधिकार की धारा 14 (1) अधिनियम, 1956 की व्याख्या इस तरह से नहीं की जा सकती है कि वह उसी अधिनियम की धारा 14 (2) और धारा 30 को नाकारा कर दे।

(ii) मास्टर कर्मी बनाम अमरू और अन्य (1972) 4 एससीसी 86), में इस न्यायालय की 3 न्यायाधीश पीठ ने इस आशय का निर्णय दिया कि एक विधवा जो वसीयत के बल पर अपने मृत पति की संपत्ति की उत्तराधिकारी बनी है वह वसीयत द्वारा प्रदत्त संपत्ति के अलावा अन्य संपत्ति पर किसी भी अधिकार का दावा नहीं कर सकती है।

वसीयत के तहत उसे जीवन काल में उपयोग एवं उपभोग करने के लिए दी गई संपत्ति हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के प्रावधानों के तहत पूर्ण संपत्ति नहीं बन सकती है।

(iii) वी. तुलसम्मा बनाम शेषा रेड्डी (1977) 3 एस. सी. सी.99, के मामले में इस न्यायालय ने धारा 14 की उप-धारा (1) और (2),के बीच के अंतर को स्पष्ट किया, और फिर वसीयतकर्ता को अपनी पत्नी को संपत्ति में जीवन काल में उपयोग एवं उपभोग करने के अधिकार को सीमित किया गया। विद्वान वकील ने तुलसम्मा मामले के निर्णय के पैरा 62 का उल्लेख किया।

(iv) वी. तुलसम्मा के मामले में एक राजीनामा डिक्री अंतर्निहित थी जो कि विधवा द्वारा अपने मृत पति के भाइयों के विरुद्ध निर्वसियत उत्तराधिकार के प्रकरण में प्राप्त

भरण पोषण की डिक्री से उत्पन्न हुई थी। उक्त प्रकरण में वसीयतनामा उत्तराधिकार की स्थितियों की विवेचना नहीं हुई थी। इसलिए, तथ्यों के मद्देनजर, यह वसीयतनामा के मामलों में लागू नहीं हो सकती है। तथापि, उक्त मामले में प्रतिपादित विधि के संदर्भ में, एक संदेह उत्पन्न हो सकता था कि क्या धारा 14(1) वसीयत के प्रत्येक मामले में लागू होगी जिसमे विधवा को संपत्ति में उपयोग एवं उपभोग के सीमित अधिकार इस आधार पर दिये गए हैं कि विधवा के पास भरण पोषण का पूर्व विद्यमान अधिकार प्राप्त था।

(v) इस संदेह को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा साधु सिंह बनाम गुरुद्वारा साहिब नारिके, (2006) 8 के मामले में हल किया गया था जहां पैरा 13 और 14 में यह निर्णीत किया गया था कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 30 के तहत प्राप्त अधिकार को धारा 14 (1) की व्यापक व्याख्या द्वारा नाकारा नहीं किया जा सकता है और इन दोनों प्रावधानों के मध्य संतुलन होना चाहिए।

(vi) उपरोक्त दृष्टिकोण की बाद में इस न्यायालय द्वारा पुष्टि कि गई थी। शरद सुब्रमण्यन बनाम सौमी मजूमदार व अन्य (2006) 8 एस. सी. सी. 91 (पैरा 20 पर), इस न्यायालय ने रेस्पोंडेंट्स के विद्वान वकील के तर्क को

बरकरार रखा कि विधि में ऐसी कोई प्रस्थापना नहीं है की हिन्दू महिला को दी गई सभी संपत्तियां अनिवार्य रूप से भरण पोषण के अधिकार की स्वीकार्यता में प्राप्त हुई हैं, फिर चाहे वह शास्त्रीय हिंदू कानून के तहत हो या विधि द्वारा स्थापित कानून के तहत हो।

(vii) विद्वान वकील द्वारा शिवदेव कौर बनाम आर. एस. ग्रेवाल के मामले में पैरा 14 को उद्धृत किया।

(viii) साधु सिंह के मामले में दर्ज कानून की स्थिति जिसका बाद में अनुगमन किया गया है, अतः यह प्रतीत होता है कि यह प्रश्न कि धारा 14 (1) एक विधवा को अपने जीवन काल में संपत्ति को उपयोग एवं उपभोग करने कि वसीयत पर होती है या नहीं वह न्यायालय द्वारा निकाले गए इस निष्कर्ष पर निर्भर करती है कि अधिकार भरण पोषण के एवज़ में प्राप्त हुआ है। अब यह दूसरी बहस की तरफ ले जाता है।"

13. विद्वान वरिष्ठ वकील श्री विश्वनाथन, का तर्क है कि वसीयत के माध्यम से विधवा को संपत्ति में उपयोग एवं उपभोग का अधिकार वास्तव में उसके भरण पोषण के एवज़ में प्राप्त हुआ है, के तथ्य का स्पष्ट रूप से अभिवचन किया जाए, साबित किया जाए और अभिलेख पर आई साक्ष्य और सामग्री के आधार पर परीक्षण करने के बाद निर्णय किया जाए।

14. इसके अलावा, जी. राम बनाम टी. जी. शेषगिरी राव, (2008) 12 एस. सी. सी. 392, के निर्णय के पैरा 17, 22 और 24 का उल्लेख करते हुए विद्वान वकील ने तर्क दिया कि यह आवश्यक है कि तनकीयात कायम की जाये, और विशेष रूप से साक्ष्य प्रस्तुत की जाये कि वसीयत में भरण पोषण के बदले संपत्ति में अधिकार दिया गया है।

15. हिन्दू विधि का यह स्थापित सिद्धान्त हें कि पति का यह निजी दायित्व हे कि वह अपनी पत्नी का भरण पोषण करे और यदि पति के पास संपत्ति हे तो पत्नी को उक्त संपत्ति में से भरण पोषण प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त है । यह भी स्थापित सिद्धान्त हे कि हिन्दू महिला का भरण पोषण का अधिकार मात्र कोई औपचारिकता नहीं है जिसे सिर्फ रियायत, अनुग्रह अथवा उपकार के रूप में इस्तेमाल किया जाए, परंतु यह एक मूल्यवान, आध्यात्मिक और नैतिक अधिकार है। हालांकि एक विधवा का भरण पोषण प्राप्त करने का अधिकार, उसके पति कि संपत्ति पर कोई अधिकार पैदा नहीं करता हे लेकिन निश्चित रूप से एक विधवा भरण पोषण का अधिकार उत्पन्न कर न्यायालय से भरण पोषण की डिक्री प्राप्त कर सकती हे।

16. हिंदू विवाहित महिला का प्रथक, भरण पोषण और निवास का अधिकार अधिनियम, 1946 बनाकर ऐसे अधिकार को वैधानिकता दी गई थी, और, इसलिए, इसमे कोई संदेह नहीं हे की भरण पोषण का अधिकार पहले से ही मौजूद एक अधिकार है।

17. वी. तुलसम्मा और अन्य बनाम शेषा रेड्डी, AIR 1977 एस. सी. 1944, में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने विस्तृत रूप से माना कि एक हिंदू महिला का भरण पोषण का अधिकार एक पूर्व-विद्यमान अधिकार है। माय लॉर्ड जस्टिस फज़ल अली ने फैसला लिखते हुए सबसे पहले कहाः

> "इस प्रकार ऊपर उल्लिखित नज़ीरों और इस विषय पर शास्त्रीय हिन्दू विधि का सावधानीपूर्वक विचार और विस्तृत विश्लेषण करने पर एक हिंदू महिला के भरण-पोषण के अधिकार के संबंध में घटनाओं और विशेषताओं पर निम्न प्रस्थापना उत्पन्न होती हैं :
>
> (1) कि एक हिंदू महिला का भरण-पोषण का अधिकार जहाँ तक पति का संबंध है, एक व्यक्तिगत दायित्व है, और यह उसका कर्तव्य है कि वह उसकी देखभाल करे, भले ही उसके पास कोई संपत्ति न हो। यदि पति के पास संपत्ति है तो विधवा का भरण-पोषण का अधिकार उसके ऊपर एक न्यायसंगत प्रभार बन जाता है और उस व्यक्ति पर भी विधवा महिला के भरण पोषण का कानूनी दायित्व होता है जो उस संपत्ति का उत्तराधिकारी बनाता है।
>
> (2) यद्यपि विधवा का भरण-पोषण का अधिकार संपत्ति का अधिकार नहीं है, लेकिन यह निस्संदेह एक पूर्व-विद्यमान

अधिकार है अर्थात यह एक jus ad rem ना कि jus in rem है और इसे उस विधवा द्वारा लागू किया जा सकता है जो कि संपत्ति के विरुद्ध अधिकार उत्पन्न कर सकती है या तो समझौता से या दीवानी अदालत से डिक्री प्राप्त करके;

(3) कि भरण पोषण का अधिकार अति महत्वपूर्ण है और इतना महत्वपूर्ण है कि संयुक्त संपत्ति होने पर जब भी संपत्ति को बेचा जाता है और खरीददार को विधवा के भरण पोषण के अधिकार का ज्ञान है, तब खरीददार कानूनी रूप से भरण पोषण प्रदान करने के लिए बाध्य होगा।

(4) कि भरण पोषण का अधिकार निस्संदेह एक पूर्व विद्यमान अधिकार है जो 1937 के अधिनियम या 1946 के अधिनियम के पारित होने से भी बहुत पहले से हिंदू शास्त्रीय कानून में मौजूद था और इसलिए, एक पूर्व-विद्यमान अधिकार है;

(5) कि भरण पोषण का अधिकार सामाजिक और पति पत्नी के मध्य लौकिक संबंध से प्रवाहित होता है, जिसके आधार पर पत्नी एक तरह से उसके पति की संपत्ति में सह स्वामिनी बन जाती है, हालांकि उसका सह स्वामित्व अधीनस्थ प्रकृति का है; और

(6) कि जहाँ एक हिंदू विधवा के आधिपत्य में अपने पति की संपत्ति है, उसे भरण पोषण के एवज़ में उक्त आधिपत्य बनाए रखने की अधिकार प्राप्त होगा, जब तक कि उक्त संपत्ति को क्रय करने वाला या उक्त संपत्ति को उत्तराधिकार में प्राप्त करने वाला हिन्दू विधवा के लिए भरण पोषण की उचित व्यवस्था नहीं कर दे।"

18. हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 के प्रावधानों की व्याख्या करते हुये लॉर्डशिप्स ने उल्लेखित किया: -

"इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों के रोशनी में निम्नलिखित सिद्धांत स्पष्ट होते हैं:

(1) कि 1956 अधिनियम की धारा 14 के प्रावधान की व्याख्या उदारतापूर्वक इस प्रकार से की जाने चाहिए कि अधिनियम के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके, जो कि एक हिंदू विधवा को उसके जीवन काल में प्राप्त संपत्ति के उपयोग एवं उपभोग के सीमित अधिकार को और अधिक विस्तार दिया जा सके जो बदलते समय के स्वभाव के साथ सामंजस्य में रहे।

(2) यह स्पष्ट है कि धारा 14 कि उप-धारा (2) किसी ऐसे हस्तांतरण का उल्लेख नहीं करती है जो विधवा को कोई स्वामित्व दिये बिना किए केवल एक पूर्व-विद्यमान अधिकार को मान्यता देता है। इस सिद्धान्त को इस न्यायालय द्वारा बद्रि प्रशाद के मामले में स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया है।

(3) कि 1956 के अधिनियम ने हिंदू समाज में क्रांतिकारी और दूरगामी परिवर्तन किए हैं और अधिनियम की प्रत्येक भावना को पूरा करने का प्रयास किया जाना चाहिए जिसने जिसने निस्संदेह निर्वसीयत उत्तराधिकार के मामलों में हिंदू पुरुष और महिला के बीच के अपमानजनक भेद को दूर करने के लिए एक लंबे समय से महसूस की गई आवश्यकता को पूरा करने की कोशिश की है

(4) कि धारा 14 की उप-धारा (2) धारा 14 की उप-धारा (1) के लिए केवल एक परन्तुक है और इसकी एक परंतुक के रूप में ही व्याख्या की जानी चाइए ना कि इस तरह से कि वह मुख्य प्रावधान के प्रभाव को ही नष्ट करें।

19. अंत में, लॉर्डशिप कानून और विभिन्न नज़ीरों पर विस्तृत विचार के बाद निम्नलिखित नतीजे पर पहुंचे :-

"अब हम कानूनी निष्कर्षों को संक्षेप में प्रस्तुत करना चाहेंगे, जिसे हम ऊपर वर्णित नज़ीरों पर एक संपूर्ण प्रयास के बाद पहुंचे हैं जो इस अपील में 1956 के अधिनियम की धारा 14 (1) और (2) की व्याख्या के विधि के प्रश्न से संबन्धित है

इन निष्कर्षों को इस प्रकार पढ़ा जा सकता हैः

(1) हिंदू महिला का भरण-पोषण का अधिकार मात्र एक औपचारिकता या कोई एक भ्रामक दावे का अधिकार नहीं है जिसे अनुग्रह

और उदारता के रूप में स्वीकार किया जाए, अपितु यह संपत्ति के विरुद्ध एक ठोस अधिकार है जो पति पत्नी के आध्यात्मिक रिश्ते से निकलता है और यह शुद्ध शास्त्रीय हिंदू विधि द्वारा मान्यता प्राप्त है और जिसे याज्ञवल्क्य से लेकर मनु तक के न्यायविद द्वारा दृढ़ता से जोर दिया गया है। हो सकता है कि यह अधिकार संपत्ति का अधिकार न हो, लेकिन यह संपत्ति के विरुद्ध अधिकार है और पति का अपनी पत्नी के भरण-पोषण करने का व्यक्तिगत दायित्व है और यदि उसके या परिवार के पास संपत्ति है, तो महिला को उक्त संपत्ति में से भरण पोषण प्राप्त करने का कानूनी अधिकार है। अगर महिला के भरण पोषण का अधिकार उत्पन्न हो गया हे तो यह अधिकार कानूनी रूप से लागू करने योग्य बन जाता है। निस्संदेह किसी भी परिस्थिति में यहाँ तक कि बिना किसी अधिकार भरण पोषण की मांग किए बिना किसी उत्तरदायित्व के एक पूर्व-विद्यमान अधिकार है, ताकि ऐसा कोई भी हस्तांतरण जो इस अधिकार की घोषणा या मान्यता देता हो वह कोई स्वामित्व का नया अधिकार उत्पन्न नहीं कर रहा है अपितु वह एक पूर्व-विद्यमान का समर्थन या पुष्टि कर रहा है।

(2) धारा 14 (1) और उसका स्पष्टीकरण को सबसे व्यापक संभावित शब्दों में इस तरह समझा जाना चाहिए कि इसे उदारतापूर्वक महिलाओं के पक्ष में पढ़ा जा सके ताकि लंबे समय से मांग किए जा रहे 1956 के अधिनियम के उद्देश्य को पूरा किया जा सके और कानून द्वारा सामाजिक-आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके।

(3) धारा 14 की उप-धारा (2) एक परंतुक की प्रकृति कि है, जिसका धारा 14 (1) के भौतिक रूप से प्रवर्तन में बिना हस्तक्षेप किए अपना एक क्षेत्र है। इस परंतुक इस तरह से व्याख्या नहीं की जाना चाहिए जिससे कि मुख्य प्रावधान का प्रभाव या धारा 14 (1) द्वारा प्रदत्त संरक्षण का प्रभाव ही नष्ट हो जाये या इस तरह व्याख्या नहीं की जानी चाहिए कि यह मुख्य प्रावधान के साथ पूरी तरह से असंगत हो जाए।

(4) धारा 14 की उप-धारा (2) उन लिखित दस्तावेज़ों, डिक्री, अवार्ड, दान वागेरह पर लागू होती है, जो स्वतंत्र रूप से महिलाओं के पक्ष में नए स्वामित्व उत्पन्न कर रहे हैं और वहाँ पर लागू नहीं होते हैं जहा पर लिखित दस्तावेज़ों द्वारा केवल पूर्व-विद्यमान अधिकारों की पुष्टि, समर्थन, घोषणा या मान्यता दी जा रही हो।

ऐसे मामलों में जहां लिखित दस्तावेज़ मात्र पूर्व-विद्यमान अधिकार की घोषणा या पहचान करता है, जैसे कि भरण पोषण, विभाजन, हिस्सेदारी का दावा जिसके लिए महिला हकदार है, वहाँ पर उप धारा के प्रावधान बिलकुल लागू नहीं होंगे और महिला का संपत्ति का उपयोग एवं उपभोग का सीमित अधिकार धारा 14 (1) के प्रावधान के आधार पर सम्पूर्ण अधिकार में स्वतः तब्दील हो जाएगा और दस्तावेज़ में यदि किसी प्रकार के प्रतिबंध लगाए गए हैं तो उन्हें नजरअंदाज किया जाएगा।

इस प्रकार जहाँ कोई संपत्ति किसी महिला को भरण पोषण के एवज़ में या विभाजन के समय एक हिस्से के बदले में, आवंटित या हस्तांतरित

की जाती है, तो लिखित दस्तावेज़ को उप-धारा (2) के दायरे से बाहर रखा जाएगा और उक्त लिखित दस्तावेज़ हस्तांतरणकर्ता की शक्तियों पर किसी भी प्रतिबंध के बावजूद धारा 14 (1) अधीन होगा।

(5) धारा 14 (1) के स्पष्टीकरण में 'हिन्दू महिला द्वारा विभाजन के समय अर्जित संपत्ति ', 'या भरण-पोषण के बदले में , 'या भरण पोषण के बकाया' वगेरह जैसे स्पष्ट शब्दों का उपयोग स्पष्ट रूप से उप-धारा (2) को इन श्रेणियों के लिए अयोग्य कर रहा है और इन्हें उप-धारा (2) के प्रवर्तन से स्पष्ट रूप से अलग कर दिया गया है।

(6) विधानमंडल द्वारा धारा 14 (1) उपयोग किए जाने वाले शब्द 'कब्जे में' सबसे व्यापक संभव आयाम का है और इसमें एक संपत्ति के मालिक होने की स्थिति भी शामिल है, भले ही मालिक के पास इसका वास्तविक या भौतिक आधिपत्य नहीं हो।

इस प्रकार, जहां एक विधवा को 1956 के अधिनियम पारित करते समय अथवा इससे पहले प्रारंभिक डिक्री से संपत्ति में हिस्सा मिला है और अंतिम डिक्री से वास्तविक कब्जा नहीं दिया गया है, तो यह माना जाएगा कि संपत्ति उसके कब्जे में थी और धारा 14(1) के प्रावधान अनुसार उसे संपत्ति में सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त होगा। यह भी समान रूप से अच्छी तरह से तय कर दिया गया है कि विधवा का कब्जा, किसी दावे, अधिकार या स्वामित्व के प्रभाव से होना चाहिए, क्योंकि यह प्रावधान बिना किसी

अधिकार के किसी भी श्रेणी के अतिक्रमणकारी के कब्जे को वैधानिकता नहीं देता है।

(7) कि धारा 14 (2) में प्रयुक्त 'निर्बंधित सम्पदा' शब्द धारा में इंगित सीमित अधिकार से अधिक व्यापक हैं और इसमे न केवल सीमित अधिकार शामिल है, बल्कि किसी अन्य प्रकार के प्रतिबंध जो कि हस्तांतरणकर्ता पर लगाए जा सकते हों भी शामिल हैं।"

20. श्री विश्वनाथन ने मास्टर कर्मी बनाम अमरू (1972 खंड। 4 एससीसी 86) के निर्णय पर बहुत अधिक भार रखा है। हमारी विनम्र राय में, उक्त प्रकरण में तय किए गए अनुपात वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होते हैं। मास्टर कर्मी (सुप्रा), के मामले में, एक जयमल, जो संपत्ति का मालिक था, ने एक वसीयत को निष्पादित किया था जिसमें निर्देश दिया गया था कि उसकी मृत्यु पर, उसकी पूरी संपत्ति अपनी विधवा निहाली को सौंपी जाएगी और इसके मृत्यु के बाद, संपत्ति को उसके सपिंडों को हस्तांतरित की जाएगी। जयमल की मृत्यु पर उक्त संपत्तियों को निहाली के नाम पर नामांकित किया गया था। निहाली, जिसकी अंततः 1960 में मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु पर, सपिंडों ने वसीयत के आधार पर संपत्तियों पर दावा किया, लेकिन अपीलार्थी ने निहाली द्वारा 1958 में की गई वसीयत अनुसार उसके एकमात्र उत्तराधिकारी के रूप में संपत्तियों पर दावा किया। इन तथ्यों पर यह निर्णीत किया गया कि निहाली जिसे वसीयत के आधार पर जयमल की संपत्तियों प्राप्त हुई थी, उन संपत्तियों में किसी भी

प्रकार का अधिकार का दावा नहीं कर सकती है, चूंकि उसे वह वसीयत से प्राप्त हुआ था। न्यायालय ने कहा कि वसीयत के तहत उसे दी गई उपयोग एवं उपभोग के लिए दी गई संपदा हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के प्रावधानों के तहत एक पूर्ण संपत्ति नहीं बन सकती है।

21. कर्मी (सुप्रा) के मामले और वर्तमान मामले के तथ्य) पूरी तरह से अलग हैं। तत्काल मामले में, वसीयत को 1920 में निष्पादित किया गया था जिसमें सुब्बा राव ने उल्लेख किया है कि उनकी पहली पत्नी की मृत्यु हो गई, दूसरी पत्नी को दो बेटे और एक बेटी है। इसके बाद दूसरी पत्नी की भी मृत्यु हो गई। फिर उन्होंने तीसरी शादी कर ली। तीसरी पत्नी के रूप में वीरराघवम्मा, जो जीवित है। वसीयत के निष्पादक ने उसके स्वामित्व वाली संपत्तियाँ के विवरण का भी उल्लेख किया है, उसने उस वसीयत में उन सम्पत्तियों का, विशेष रूप से परिसर की दीवार में स्थित एक टाइल वाला घर का उल्लेख किया है जिसका उपयोग एवं उपभोग उसकी तीसरी पत्नी वीरराघवम्मा करेगी। वसीयत में यह भी उल्लेख किया गया था कि एक अलग घर के पिछवाड़े में स्थित कुएँ मेँ से विधवा वीरराघवम्मा को भी पानी भरने का अधिकार होगा। अन्य शब्दों में, वसीयत के निष्पादक ने वादग्रस्त अनुसूचित संपत्ति में अपनी तीसरी पत्नी उसके जीवन काल मेँ संपत्ति में उपयोग एवं उपभोग कि व्यवस्था कर दी थी। इसलिए निष्पादक का इरादा स्पष्ट है कि उसने अपनी तीसरी पत्नी वीरराघवम्मा को उसके जीवनकाल के दौरान उसके भरण पोषण के लिए

वादग्रस्त अनुसूचित संपत्ति को उपयोग एवं उपभोग के लिए दे दी थी। यह कर्मी जैसा प्रकरण नहीं है कि वसीयत को निष्पादित करके, निष्पादक ने उसकी पूरी संपत्ति उसकी विधवा वीरराघवम्मा को सौंप देने का निर्देश दिया हो।

22. आर. बी. एस. एस. मुन्नालाल व अन्य बनाम एस.एस.राजकुमार व अन्य, ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 1493, के मामले में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने अधिनियम की धारा 14 (1) के प्रावधानों की व्याख्या करते हुए कहा कि:

"16. धारा 14 (1) द्वारा विधायिका ने एक हिंदू महिला के हित जिन्हें शास्त्रों के अधीन सीमित अधिकार माना जाता हे की मांग को एक पूर्ण अधिकार में परिवर्तित कर दिया और उसके स्पष्टीकरण द्वारा "संपत्ति" अभिव्यक्ति को व्यापक अर्थ दिया गया। इस अभिव्यक्ति में एक हिंदू महिला द्वारा विरासत या लिखित दस्तावेज़ द्वारा, या विभाजन पर, या भरणपोषण के एवज़ में या भरणपोषण के बकाया के बदले, या दान के रूप में किसी भी व्यक्ति से चाहे वह विवाह से पहले, विवाह के समय या विवाह के बाद का रिश्तेदार हो या नहीं, या उसके अपने कौशल या परिश्रम से, या खरीद या चिरभोग द्वारा, या जो कोई भी किसी अन्य तरीके से अर्जित कि हो। धारा 14 (1) द्वारा स्पष्ट रूप से हिंदू महिला को संपत्ति में प्राप्त अधिकार, चाहे उस अधिकार की प्रकृति को शास्त्र विधि द्वारा सीमित किया गया हो, को सम्पूर्ण सम्पदा में परिवर्तित करने का मंशा है। प्रतापमुल के मामले में

निस्संदेह यह कहा गया है कि जब तक हिन्दू पत्नी या माता के घोषित हिस्से का वास्तविक विभाजन उसके पक्ष में संयुक्त परिवार की संपत्ति के विभाजन की प्रारम्भिक डिक्री द्वारा घोषित नहीं कर दिया जाता, तब तक उसे स्वामिनी के रूप में मान्यता नहीं दी जा सकती हे, लेकिन वह नियम हमारे निर्णय में हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के कानून बन जाने के बाद लागू नहीं हो सकता है। यह अधिनियमन एक संहिताबद्ध कानून है जिसने विरासत के और उत्तराधिकार के हिंदू कानून की संरचना में दूरगामी परिवर्तन किए हैं।

यह अधिनियम हिंदू महिलाओं को विरासत के पूर्ण अधिकार प्रदान करता है और प्रबंधन शक्तियों जिन्हें हिंदू कानून के तहत उसकी संपत्ति में निहित माना जाता था, पर लगी पारंपरिक रोक हटा देता है। वह अधिनियम के तहत उसकी मृत्यु के समय उसके कब्जे वाली संपत्ति के संबंध में वंश की एक नई शाख के रूप में मानी जाती है। यह सच है कि हिंदू शास्त्रीय विधि के तहत, एक हिंदू विधवा को उसके बेटों या उसके पोते के बीच विभाजन पर दिया गया हिस्सा भरण पोषण का एक अन्य अधिकार था। वह विभाजन का दावा करने की हकदार नहीं थी। लेकिन हिंदू महिलाओं के संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937 पारित करके विधानमंडल ने कानून की शाखा में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन किया;

अधिनियम ने एक हिंदू विधवा को वही अधिकार दिया है जो उस संपत्ति में उसकी मृत्यु के समय उसके पति के पास था, और अगर संपत्ति

का विभाजन किया जाता है तो वह प्रबंधन सीमाओं पर लगी रोक और वास्तविक मृत्यु अथवा सिविल मृत्यु पर सम्पदा की समाप्ती के विशिष्ट नियम के अधीन होते हुये भी अपने प्रथक हिस्से की स्वामिनी बन जाती हे। इस विस्तार को ध्यान में रखते हुए यह कताई भी नहीं माना जा सकता कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 को अधिनियमित करते हुए, विधायिका का उद्देश्य केवल प्रतापमुल मामले में प्रिवी काउंसिल द्वारा घोषित नियम को लागू करना था। अधिनियम की धारा 4 अधिनियम के प्रावधानों को अधिभावी प्रभाव देता है।

23. निर्मल चंद बनाम विद्या वंती, (1969) 3 एस. सी. सी. 628 के मामले में तीन न्यायाधीशों द्वारा दिये गए निर्णय को भी संदर्भित किया जा सकता है। उक्त मामले में, एक पंजीकृत विभाजन के दस्तावेज द्वारा भूमि के उपयोग संबंधित अधिकार विधवा को दिया गया था- उपयोगकर्ता को किसी भी प्रकार से उक्त संपत्ति को हस्तांतरण का अधिकार नहीं होगा। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि मामला अधिनियम की धारा 14 (1) के तहत आता है जो इस प्रकार हैः

"6. अगर सुभराई बाई अपने पति के हिस्से की सम्पत्तियाँ हकदार थीं तब वादग्रस्त संपत्तियों को कानून के अनुसार उसे दी जानी चाहिए थी। तत्समय प्रवृत कानून के अनुसार उसके द्वारा ली गई संपत्तियों में उसका केवल उपयोग एवं उपभोग का अधिकार था। इसलिए प्रश्नगत विलेख में यह लिखा होना कि उसका संपत्तियों में केवल उपयोग एवं उपभोग का अधिकार

है मात्र विधिक स्थिति को अंकित करने जैसा था। इसलिए इसे यही विराम नहीं दिया जा सकता की प्रशनगत संपत्तियाँ उसे जीवन भर उपयोग एवं उपभोग की शर्त के साथ दी गई थी। इसलिए यह निचली अदालत के साथ-साथ पहली अपीलीय अदालत भी यह अभिनिर्धारित करने में सही थी कि मामले के तथ्य धारा 4 (2) हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के अंतर्गत नहीं आते हैं। नतीजतन हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) को ध्यान में रखते हुए सुभराई बाई को वादग्रस्त संपत्तियों में पूर्ण अधिकार प्राप्त होना माना जाना चाहिए।

24. थोटा शेषरथम्मा बनाम थोटा तुलसम्मा(1991) 4 SCC 312 के मामले में हिन्दू महिला को सम्पदा के उपयोग एवं उपभोग का सीमित अधिकार वसीयत द्वारा प्रदान किया गया और यह एक पूर्व विद्यमान अधिकार की पुष्टि में दिया गया था। तुलसम्मा के मामले में, लॉर्डशिप ने माना कि मास्टर कर्मी के निर्णय को अधिनियम की धारा 14 (1) और (2) की परिधि में प्रमाण के रूप में नहीं माना जा सकता है। न्यायालय ने कहाः

"9. उपरोक्त मामले में यह स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया गया था कि धारा 14 (2) अधिनियम का एक परंतुक की प्रकृति में है या धारा 14 (1) का अपवाद है और केवल तभी लागू होता है जब हिन्दू महिला का संपत्ति का अधिकार बिना किसी पूर्व-अस्तित्व के, धारा में इंगित किसी भी

तरीके से पहली बार हस्तांतरण किया जाता है। बेंच में माननीय जे. सी. शाह, वी. रामास्वामी और ए. एन.ग्रोवर, जे जे शामिल थे।

10. मास्टर कर्मी बनाम अमरू वाला मामला जिस पर अपीलार्थी के विद्वान वकील द्वारा निर्भरता रखी है को भी तीन माननीय न्यायाधीश जे. सी. शाह, के. एस. हेगड़े और ए. एन. ग्रोवर जे जे की पीठ द्वारा निर्णय दिया गया था। यहाँ यह उल्लेखित करना आवश्यक है कि दो माननीय न्यायाधीश, जे. सी. शाह और ए॰ एन ग्रोवर दोनों मामलों में मौजूद थे। मास्टर कर्मी बनाम अमरू, के मामले में एक जयमल की 1938 में मृत्यु हो गई जो अपने पीछे अपनी पत्नी निहाली को छोड़ गया। उनके पुत्र दिट्टा ने उनकी मृत्यु से पहले ही दम तोड़ दिया था। अपीलार्थी उपरोक्त मामले में डिट्टा की बेटी थी और रेस्पोंडेंट्स जयमल के सपिंड थी। जयमल ने सर्वप्रथम 18 दिसंबर, 1935 को एक वसीयत निष्पादित कि और बाद में 13 नवंबर, 1937 को वसीयत रद्द कर दी। दूसरी वसीयत से निहाली को एक संपदा जीवन काल में उपयोग एवं उपभोग के लिए दी गई और उसके बाद सपिंड भगतू और अमरू को संपत्ति को हस्तांतरित होनी थी। 1938 में जयमल की मृत्यु होने पर संपत्तियों को निहाली के नाम पर नामांकित हुई। निहाली की मृत्यु 1960/61 में हुई। अपीलार्थी श्रीमती कर्मी ने निहाली द्वारा उसके पक्ष में दिनांक 25 अप्रैल, 1958 को निष्पादित वसीयत के आधार पर अधिकार का दावा किया। यह निर्णीत किया गया कि विधवा को अपने पति की वसीयत से संपत्ति में उपयोग एवं उपभोग का दिया गया अधिकार

उत्तराधिकार अधिनियम के प्रावधानों के तहत एक पूर्ण संपत्ति का अधिकार नहीं बन सकता है। इसके बाद, अपीलार्थी विधवा निहाली द्वारा उसके पक्ष में निष्पादित वसीयत के आधार पर संपत्तियों का स्वामित्व का दावा नहीं कर सकता है। यह एक संक्षिप्त निर्णय है जिसमे अधिनियम की धारा 14 (1) या 14 (2) के किसी भी प्रावधान का उल्लेख नहीं किया गया है। फैसले में न तो इस संबंध में ना तो बहस में किए गए तर्कों का उल्लेख किया हैं और ना ही इससे पहले के निर्णय बद्री पर्सद बनाम श्रीमती कान्सो का उल्लेख किया गया है। मास्टर कर्मी का मामला अधिनियम की धारा 14 (1) और (2) के दायरे में एक प्रमाण के रूप में नहीं माना जा सकता है।

25. शकुंतला देवी बनाम कमला और अन्य, (2005) 5 एस. सी. सी. 390, में तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिये गए निर्णय का भी उल्लेख किया जा सकता है। जहाँ एक हिंदू पत्नी को वसीयत द्वारा भरण पोषण के लिए संपत्ति के उपयोग एवं उपभोग के लिए इस शर्त के साथ दिया गया कि उसे उक्त संपत्ति को किसी भी प्रकार से हस्तांतरण करने का अधिकार प्राप्त नहीं होगा। वसीयत के अनुसार, पत्नी की मृत्यु के बाद, उक्त संपत्ति को उसकी बेटी को सम्पूर्ण स्वामित्व के साथ वापस होना था। इस तथ्य पर लॉर्डशिप ने तुलसीम्मा के मामले (ऊपर) में तय किए गए अनुपात का पालन करते हुए माना कि धारा 14 (1) कि पालना से पत्नी को

वसीयत के तहत दिए गए सीमित अधिकार को वादग्रस्त संपत्ति में पूर्ण अधिकार में तब्दील किया जा सकता है।

26. प्रत्यर्थी कि और से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री के. रमामूर्ती, ने संतोष और अन्य बनाम सरस्वतीबाई व अन्य (2008) 1 एस.सी.सी. 465, सुभान राव व अन्य बनाम पार्वती बाई व अन्य (2010) 10 एस.सी.सी. 235 और श्री रामकृष्ण मठ बनाम एम. महेश्वरन और अन्य, (2011) 1 एससीसी 68 के मामले में किए गए निर्णय पर भी भरोसा किया,

27. संतोष(सुप्रा) के मामले में, इस न्यायालय ने नजर सिंह (1996) 1 एस. सी. सी. 35 में दिया गए निर्णय का पालन किया, और अभिनिर्धारित किया कि पत्नी का पूर्व-विद्यमान अधिकार स्पष्टीकृत था और भरण पोषण के बदले में संपत्ति के उपयोग एवं उपभोग का उसका सीमित अधिकार एक पूर्ण अधिकार में तब्दील हो गया।

28. इससे पहले भी इस न्यायालय के समक्ष इसी तरह का एक सवाल सुभान राव(सुप्रा) के मामले में विचार के लिए आया था, जहां वादग्रस्त संपत्ति का एक हिस्सा वादी-पत्नी को उसके भरण पोषण के एवज़ में इस शर्त के साथ दी गई कि वह उक्त भूमि को हस्तांतरित नहीं कर पाएगी। सवाल यह उठा कि क्या अधिनियम की धारा 14 (1) के आधार पर वह वाद ग्रस्त संपत्ति की मालिक बन गई। इस न्यायालय के पहले के सभी निर्णयों को ध्यान में रखते हुए लॉर्डशिप ने अभिनिर्धारित किया कि

अधिनियम की धारा 14 (1) पालना से उसका भरण पोषण के एवज़ में पूर्व-विद्यमान अधिकार एक पूर्ण अधिकार में तब्दील हो गया।

29. नजर सिंह और अन्य बनाम जगजीत कौर व अन्य (1996) 1 एस. सी. सी. 35 के मामले में इस न्यायालय ने तुलसम्मा के मामले में दिये गए निर्णय का पालन करते हुये निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

"9. धारा 14 और उप-धारा (1) और (2) से संबंधित क्षेत्र और दायरा इस न्यायालय के कई निर्णयों का विषय रहा है – जिसमे से सबसे महत्वपूर्ण निर्णय वी. तुलासम्मा बनाम सेशा रेड्डी का है इस निर्णय में प्रतिपादित सिद्धांत हैं बाद में कई फैसलों में दोहराया गया लेकिन कभी भी इससे दूर नहीं अपनाई गई। इस निर्णय के अनुसार, उप-धारा (2) उन मामलों तक सीमित है जहां एक महिला हिंदू द्वारा पहली बार दान, वसीयत, लिखित दस्तावेज़, डिक्री, आदेश, अथवा पंचाट से संपत्ति अर्जित की है, जिसकी शर्तें संपत्ति में हस्तांतरण की रोक के साथ सीमित अधिकार प्रदान करती है। यह भी माना गया है कि जहां एक हिंदू महिला द्वारा संपत्ति भरण पोषण के अधिकार के एवज़ में प्राप्त की है तब यह एक पूर्व-विद्यमान अधिकार के आधार पर है और ऐसा हस्तांतरण उप-धारा (2) के क्षेत्र और दायरे में नहीं आएगा भले ही संपत्ति का देने वाला लिखत, डिक्री, आदेश या पंचाट संपत्ति के हस्तांतरण पर रोक उल्लेखित कर रहा हो। इस सिद्धांत को लागू करते हुए, यह माना जाना चाहिए कि वादग्रस्त संपत्ति, जो कि गुरदियाल सिंह ने हरमेल कौर को भरण पोषण के एवज़ में दी थी, को

हरमेल कौर द्वारा पूर्ण मालिक के रूप में अपने पास राखी ना कि एक सीमित मालिक के रूप में, बावजूद इसके कि हस्तांतरण कई प्रतिबंधात्मक शर्तों के साथ किया गया था। [हाल ही में मंगतमल बनाम पुन्नी देवी में इस न्यायालय द्वार लिया गया निर्णय भी देखें। जिसमे मकान में निवास के अधिकार में धारा 14 कि उप धारा (1) का लागू होना माना गया इस तथ्य के बावजूद कि लिखत ने स्पष्ट रूप से उसे केवल एक सीमित संपत्ति प्रदान की थी।] उप-धारा (1) के अनुसार, जहां कोई संपत्ति एक हिंदू महिला को उसके भरण पोषण के एवज़ में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम के प्रारम्भ होने से पहले दिया गया है। ऐसी संपत्ति हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की लागू होने की दिनांक से महिला की पूर्ण संपत्ति बन जाती है, बशर्ते कि उक्त संपत्ति उक्त दिनांक को उसके आधिपत्य में हो। लेकिन, जहां एक हिंदू महिला को, अधिनियम के लागू होने के बाद, भरण पोषण के एवज़ में संपत्ति दी जाती है तो वह उसी क्षण उसकी सम्पूर्ण मालिक बन जाती जब कि उसे उक्त संपत्ति का आधिपत्य प्राप्त हो जाता है, (जब तक कि, बेशक, वह पहले से ही कब्जे में है) बावजूद इसके कि उक्त लिखत, अनुदान अथवा पंचाट में जिससे उसे यह संपत्ति दी गई है, उसमें उसके अधिकारों को सीमित करने का प्रावधान मौजूद हों,

यह प्रस्थापना उप-धारा (1) के इन शब्दों से मिलती है, जो जहाँ तक प्रासंगिक है, पढ़िएः "हिंदू नारी के स्वामित्व वाली कोई भी संपत्ति.....पूर्ण स्वामी के तौर पर न कि परिसीमित स्वामी के तौर

पर धारित कि जाएगी।" इस अधिनियम का प्रारंभ उसके द्वारा पूर्ण रूप से माना जाएगा।

दूसरे शब्दों में, हालांकि लिखत, अनुदान, पुरस्कार या विलेख एक सीमित सम्पदा या निर्बंधित सम्पदा विहित कर रहे हों, बनाता है, जैसा भी मामला हो, यह एक पूर्ण संपत्ति में परिवर्तित हो जाएगा बशर्ते कि उक्त संपत्ति हिन्दू महिला को भरण पोषण के एवज़ में दी गई हो और उक्त संपत्ति का कब्जे उसे दे दिया गया हो।

जहां तक "धारित" शब्द कि अभिव्यक्ति का संबंध है, यह भी इस न्यायालय के कई निर्णयों की विषय वस्तु रहा है जिसे इस मामले के उद्देश्य के लिए संदर्भित करना आवश्यक नहीं है।

30. साधु सिंह के मामले (2006) 8 एस. सी. सी. 75, के तथ्य वर्तमान मामले से काफी भिन्न थे। साधु सिंह के मामले में, यह न्यायालय इस आधार पर प्रवृत हुआ कि विधवा का संपत्ति में कोई पूर्व-विद्यमान अधिकार नहीं था, और इसलिए वसीयत में उसे उपयोग एवं उपभोग के लिए दी गई संपत्ति अधिनियम की धारा 14 (1) के तहत पूर्ण संपदा में विस्तारित नहीं की जा सकती है।

31. अपीलर्थी की और से उपस्थित श्री विश्वनाथन, विद्वान वरिष्ठ वकील का अंतिम तर्क था कि बिना किसी अभिवचन और अपीलर्थी की ओर से इस दलील की पुष्टि के लिए सबूत दिये बिना कि वीरराघवम्मा ने संपत्ति पर कब्जा भरण पोषण के एवज़ में प्राप्त किया है, धारा 14 स्वतः

लागू नहीं होगी। हम विद्वान वकील द्वारा प्रस्तुत दलील में कोई सार नहीं पाते हैं। निर्विवाद रूप से, प्रदर्शए-2 एक दस्तावेज है जो बहुत स्पष्ट रूप से साबित करता है कि विचाराधीन संपत्ति वीरराघवम्मा को उसके मृत्यु तक उपयोग एवं उपभोग के लिए दी गई थी। ना तो उक्त प्रदर्श ए-2 की प्रामाणिकता विवादित थी और न ही यह विवादित था कि वीरराघवम्मा भरण पोषण के माध्यम से संपत्ति का उपयोग एवं उपभोग कर रही थी।। हमारे विनम्र मत में जब तक कि पत्नी के पक्ष में संपत्ति वसीयत करने का तथ्य और उसका निरंतर आधिपत्य विवादित नहीं होते हैं, अभिवचन और सबूत का सवाल ही नहीं उठता।

दूसरे शब्दों में, वसीयत में की गई व्यवस्था पर किसी ने विवाद नहीं किया और वीरराघवम्मा ने भरण पोषण के एवज़ में उक्त संपत्ति का उपयोग एवं उपभोग लेना जारी रखा। इसलिए, जी॰ रामा(सुप्रा) में तय किया गया अनुपात इस मामले में लागू नहीं होता है।

32. इसके अलावा, निर्विवाद रूप से, संपत्ति के मूल मालिक श्री पी. वेंकट सुब्बा राव को इस तथ्य का एहसास था कि उनकी पत्नी वीरराघवम्मा निःसंतान थीं और उसे संपत्ति से भरण पोषण प्राप्त करने का एक पूर्व-विद्यमान अधिकार प्राप्त है। पी. वेंकट सुब्बा राव ने आगे महसूस किया कि वह शारीरिक रूप से कमजोर हो गया था और लंबे समय तक जीवित नहीं रह सकता था। इसलिए उसने अपनी संपत्ति अपने परिवार के सदस्यों को देने का फैसला किया। अपनी तीसरी पत्नी वीरराघवम्मा, के भरण-पोषण के

लिए उसने परिसर की दीवार के साथ टाइल वाला घर इस शर्त के साथ दिया कि वह अपने जीवन काल में भरण पोषण के एवज़ उपयोग एवं उपभोग में लेगी। साथ ही उसे कुएँ से पानी भरने और अन्य सुविधाओं का उपयोग करने का भी अधिकार प्राप्त होगा। निस्संदेह, किसी के भी द्वारा वसीयत में की गई व्यवस्थाओं पर विवाद नहीं किया और वीरराघवम्मा ने उक्त संपत्ति का उपयोग एवं उपभोग करना जारी रखा। उक्त स्वीकृत स्थिति को ध्यान में रखते हुए, हमें यह मानने में कोई संदेह नहीं है कि वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में अधिनियम की धारा 14 (1) के अनुसार, उसका सीमित अधिकार पूर्ण अधिकार बन चुका था।

33. आक्षेपित निर्णय में, उच्च न्यायालय ने मामले के तथ्यों और कानून पर विस्तार से चर्चा की है और इस निष्कर्ष पर पहुँची है कि ट्रायल कोर्ट ने यह अभिनिर्धारित करने में कानून की गंभीर त्रुटि की है कि अधिनियम की धारा 14 (2) की पालना में, विधवा के सीमित अधिकार पूर्ण अधिकार नहीं बन पाये है।

34. हालांकि प्रदर्शि ए-2 में कोई विशिष्ट शब्द का उल्लेख नहीं किया गया है कि भरण पोषण के एवज़ में वीरराघवम्मा के पक्ष में संपत्ति के उपयोग एवं उपभोग का अधिकार उत्पन्न हुआ है, हमारे विनम्र मत में जिसके पास भरण पोषण का एक पूर्व-विद्यमान अधिकार मौजूद है और जिस किसी भी रूप में उसके पक्ष में जो संपत्ति के उपयोग एवं उपभोग का

सीमित अधिकार उत्पन्न हुआ है, वही हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) की पालना से एक पूर्ण अधिकार बन गया है

35. इस मामले पर और इस न्यायालय की न्यायिक निर्णयन की एक श्रृंखला पर हमारे उत्सुकतापूर्ण विवेचन के बाद, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि कि उच्च न्यायालय का आक्षेपित निर्णय पूरी तरह से कानून के अनुसार है और इसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं है।

36. उपरोक्त कारणों से, इस अपील का कोई औचित्य नहीं है और इसे खारिज किया जाता है। हालांकि, खर्चों के बारे में कोई आदेश नहीं दिया जा रहा है।

अपील खारिज की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक अधिवक्ता शाहिद खान पठान (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।